Research Article

कल्प वेदांग में यज्ञ की प्रासंगिकता

स्नेहा पाठक[1*]

[1]धर्मविज्ञान विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार
*Corresponding author Email: snehlata.pathak@dsvv.ac.in
http://doi.org/10.36018/ijyr.v3i1.51

सारांश. वेद वैदिक साहित्य का आधार हैं। वेद चार हैं - ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद। वेदों का सुगमता एवं सरलता से अध्ययन करने के लिए वेदांगो की रचना हुई है; यह 6 वेदांग है – शिक्षा, छंद, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और कल्प। वेदविहित कर्मों, यज्ञ संबंधी कर्मकांड तथा विविध संस्कार आदि का जिस शास्त्र में क्रमबद्ध रूप से प्रतिपादन किया जाए वही कल्प कहलाता है। वेद का प्रमुख विषय यज्ञ है। इस दृष्टी से कल्प वेदांग महत्वपूर्ण हैं। यज्ञों का जो विवेचन ब्राह्मण ग्रन्थों में प्राप्त है लेकिन वे बहुत ही जटिल हैं उनको सरल, शुलभ एंव स्पष्ट करने के लिए कल्प सूत्रों की रचना अनिवार्य थी। कल्प वेदांग के यह ग्रंथ सूत्रों के रूप में है , इन कल्प सूत्रों को चार भागों में विभक्त किया गया है – 1) श्रौतसूत्र, 2) शुल्वसूत्र, 3) धर्मसूत्र, 4) गृहसूत्र।

श्रौतसूत्र ग्रंथों को ब्राह्मण ग्रंथों का सार कहा जा सकता है , क्योंकि ब्राह्मणग्रंथों में कर्मकांड अर्थात यज्ञ कर्मकांड आदि को अत्यंत विस्तृत रूप में बताया गया है और श्रौत सूत्रों में उन्हीं यज्ञ विधि-विधान का साररूप में वर्णन देखने को मिलता है। शुल्बसूत्र संस्कृत के सूत्रग्रन्थ हैं जो श्रौत कर्मों (वैदिक यज्ञ) से सम्बन्धित हैं। इनमें यज्ञ-वेदी की रचना से संबंधित ज्यामितीय ज्ञान दिया हुआ है। अधिकतर गृहसूत्रों में धर्मसूत्रों के ही विषय मिलते हैं। पूतगृहाग्नि , गृहयज्ञ विभाजन, प्रातः सायं की उपासना , अमावस्या पूर्णमासी की उपासना , पके भोजन का हवन , वार्षिक यज्ञ, पुंसवन, जातकर्म, विवाह, उपनयन एंव अन्य संस्कार छात्रों स्नातकों एंव छुट्टियों के नियम , श्राद्ध कर्म, इत्यादि है। धर्मसूत्र की विषय परिधि बहुत विस्तृत है , उसका मुख्य विषय आचार विधि-नियम एंव क्रिया-संस्कारों की विधिवत चर्चा करना है। गृहसूत्रों में मुख्यतः गृह संबंधी के याज्ञिक कर्मों एवं संस्कारों का वर्णन है, जिसका सम्बन्ध मुख्यतः गृहस्थ से है। धर्मसूत्र की विषय वस्तु एंव प्रकरणों में धर्मसूत्रों का गृहसूत्रों से घनिष्ट संबंध है। धर्मसूत्रों और गृहसूत्रों मे पारिवरिक और सामाजिक जीवन के साथ साथ आंतरिक जीवन यज्ञ के सूत्र हैं। इन चारो कल्प सूत्रों मे यज्ञ के आंतरिक एवम बाह्य (कर्मकाण्ड परक) यज्ञ के सारे सूत्र उपलब्ध है जिसका व्यक्ति व समाज के उत्थान के लिये उपयोग किया जा सकता है।

कूटशब्द. कल्प, वेदांग, यज्ञ, श्रौतसूत्र, शुल्वसूत्र, धर्मसूत्र, गृहसूत्र।

भूमिका

वेद वैदिक साहित्य का आधार हैं। वेद चार हैं - ऋग्वेद , यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद। वेदों की भाषा क्लिष्ट होने के कारण उसके अर्थ को जानना कठिन था। वेदों के विषय के अर्थ को जानने के लिए ऋषियों ने समय समय पर अन्य साहित्यों की रचना की जिससे कि वेदों की भाषा को सरल और सुलभ बनाया जा सके। अतः वेदों का अध्ययन करने के लिए जिन उपकारक ग्रंथों की रचना हुई है , उन्हें वेदांग कहते हैं। वेदांग दो शब्दों से मिलकर बना है वेद + अंग। वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है और अंग शब्द का अर्थ उपकारक - "अग्यन्ते ज्ञायन्ते अमीभिरतिअंगानि" (1)। जिनके माध्यम से किसी वस्तु के स्वरूप को जानने में सहायता मिले उन्हें अंग कहते हैं। वेदांग का ज्ञान वेद के ज्ञान के लिए अतिआवश्यक है।

वेदांग ग्रंथों में वेदों का मुख्य रूप से दो प्रकार से अध्ययन किया जाता है, प्रथम अर्थ भाषा विषयक या ज्ञान काण्ड। ज्ञान संबंधी वेदांग के अंतर्गत निरुक्त, व्याकरण, छंद तथा शिक्षा का अध्ययन किया जाता है और भाषा विषय के अंतर्गत कर्मकांड विषयक अर्थ कल्प एवं ज्योतिष है। इस प्रकार से वेदांग 6 हैं। अतः वैदिक साहित्य में कल्प वेदांग का प्रमुख अंग है। आपस्तंभ में वेदागो को एक क्रम में रखा है शिक्षा , कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद और ज्योतिष। 2.4.8 "षडंगो वेदः कल्पों व्याकरणंज्योतिषम निरुक्तम शिक्षा" (1) (पृष्ठ-5)।

वेदांग का समुचित ज्ञान हो जाने पर अध्ययन करने वाला वेदों का ज्ञाता हो जाता है और वेदों के मर्म को समझने में समर्थ हो जाता है। प्राचीन काल में ऋषि , ध्यानी, मुनि, साधु, संत, महात्मा, सन्यासी, ज्ञानी ही वेदागों के ज्ञाता हो कर वेदों के मंत्रों का साक्षात्कार करते थे। इसीलिए आचार्य यास्क कहते हैं -"ऋषियोहि मंत्र दृष्टारः " (2), अर्थात ऋषि मंत्रों का साक्षात्कार करते है। पाणिनि शिक्षा ग्रंथ में एक रूपक के द्वारा इन्हें वेदों का अंग बताया है - जैसे छंद वेद के पाद हैं , कल्प हाथ है, ज्योतिष आंखें हैं, निरुक्त कान है, शिक्षा नासिका है, और व्याकरण मुख है (3)।

ऐसा कहा जाता है कि इन वेदागों के साथ वेदों का अध्ययन करने पर ही ब्रह्म लोक की प्राप्ति संभव है। उपनिषदों और महाभाष्यमें भी इन वेदांगोका उल्लेख मिलता है। मुंडक उपनिषद में दो प्रकार की विद्या परा और अपरा बताए गए हैं। इसमें अपरा विद्या में चारों वेदों के साथ साथ उनके अंगों का भी वर्णन है। महाभाष्य में भी वर्णित है कि ब्राह्मण को बिना किसी कारण या प्रयोजन के भी वेदांग का अध्ययन करना चाहिए, गोपथ ब्राह्मण में एवं अन्य प्राचीन ग्रंथों में भी इन 6 वेदांगो का उल्लेख है इससे यह स्पष्ट है कि वेदों का सुगमता एवं सरलता से अध्ययन करने के लिए वेदांगो की रचना हुई है। यह 6 वेदांग वेदों के अध्ययन तथा उनके अभिप्राय को समझने के लिए अत्यंत उपयोगी है।

छह वेदांग

शिक्षा

उस शास्त्र का नाम है जिसमें वर्णों और शब्दों का सही उच्चारित किया जाता है और ऐसा माना जाता है कि प्राचीन आर्य यज्ञ व अन्य धार्मिक कार्यो में वेद मंत्रों का विनियोग तभी पूर्ण रूप से फल दे सकता है जब उनका शुद्ध उच्चारण किया जाय इसी लिए उन्होंने शिक्षा वेदांग के अनेक ग्रंथों की रचना की। जिसमें 'पाणिनीय शिक्षा' इस विषय का प्रथम ग्रन्थ है। जिसमें इस शास्त्र का सुव्यवस्थित विवेचन हुआ है (3) (पृष्ठ-24)। वर्तमान में यजुर्वेद का याज्ञवल्क्य शिक्षा , सामवेद की नारद शिक्षा, अथर्ववेद की माण्डूकी शिक्षा है (3) (पृष्ठ-24)।

छंद

शास्त्रों मेंवैदिक छंदों का विवेचन किया जाता है क्योंकि अधिकांश वैदिकरचनाएं छंदों में है उनका शुद्ध उच्चारण तभी हो सकता है जब छंदों का पूर्ण ज्ञान या भली प्रकार से ज्ञान हो, मात्रा और अक्षरों का ज्ञानहो , क्योंकि मंत्र का बाहरी रूप मात्रा, चरण आदि का बोधछंद के द्वारा ही होता है इन समस्त अंगों का अपना-अपना महत्व है इसीलिए छंद शास्त्र को वेदांग में "पाद" रूप से निरूपित किया गया है। इसीलिए छंदों के महत्व को बताते हुए कात्यायन ने "सर्वानुक्रमणी" में लिखा है कि - जो कोई ऋषि, चंद्र तथा देवता से अविदित होते हुए मंत्र से यज्ञ कराता है या मंत्रों को पढ़ाता है , गड्ढे में गिरता है और पाप का भागी होता है (4)। पद्यो के लिए छंद ज्ञान आवश्यक है साथ ही वेदों में जो गद्य भाग हैं उसके लिए आवश्यक है क्योंकि वह भी किसी न किसी छंद के नियमो के अनुसार निर्मित है। इस संबंध में कात्यायन का यह कथन अत्यंत महत्वपूर्ण है कि ज्ञानी व्यक्ति के लिए यह सारा वागंमय (वैदिक वांग्मय) छंदो भूत (छंद के नियमों से आबद्ध है) ही है (4)। भरतमुनि के अनुसार न शब्द के बिना छंद हो सकता है और न छंद के बिना शब्द (5)। इस प्रकार से वैदिक ऋचाएं

चाहे पद्य में हो और चाहे गद्य के रूप में , सब छंदों में हैं, और इन छंदों का ज्ञान वेद मंत्रों के सम्यक उच्चारण सस्वर पाठ के लिए अनिवार्य है।

व्याकरण

व्याकरण शब्द की रचना के ज्ञान के लिए , प्रकृति तथा प्रत्यय के ज्ञान के लिए व्याकरण वेदांग का अध्ययन अत्यंत अनिवार्य है। शब्दों की मीमांसा का ज्ञान व्याकरण का कार्य है , इसमें वेदों में आए हुए शब्दों और पदोंकी व्युत्पत्ति दी गई है , और उनके शुद्ध रूप को स्पष्ट किया गया है।

निरुक्त

निरुक्त शास्त्र को षड वेदांगों में प्रमुख माना गया है। इस वेदांग में शब्दों की व्युत्पत्ति या निरूक्ति का प्रतिपादन किया गया है। इसके अनुसार प्रत्येक शब्द किसी न किसी धातु से संबंधित है इसी कारण यह वेदांग शब्दों को व्युत्पन या धातुज मानता है। इस वेदांग में वेदों में आए हुए कुछ कठिन पदों का निर्वचन किया गया है। जो वेद का अर्थ एवं ज्ञान कराने में सहायक है। यास्काचार्य का निरुक्त इस शास्त्र का प्रसिद्ध ग्रंथ है , एवं वेदांग का एकमात्र प्रतिनिधि ग्रंथ है।

ज्योतिष

इस वेदांग में यज्ञ कर्मकांड इत्यादि वेदविहित कार्यों को करने के लिए उचित समय मुहूर्तआदि का विचार किया गया है अर्थात यज्ञ कर्मकांड कब हो, किस तिथि में हो, किस नक्षत्र में हो आदि का ज्ञान ज्योतिष के माध्यम से ही होता है। आर्यभट्ट, वराह, मिहिर आदि अनेक ज्योतिषाचार्य हुए हैं , लेकिन प्राचीन समय का एकमात्र ज्योतिष शास्त्र वर्तमान में उपलब्ध है जिसका नाम "ज्योति वेदांग" है। इसमें 40 श्लोक हैं और सूर्य चंद्र नक्षत्र आदि का वर्णन है।

कल्प

युग चार हैं – सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग तथा कलयुग। इन चार युगों का एक महायुग होता है। एक हजार महायुग मिलकर एक कल्प बनाते हैं। इस प्रकार कल्प एक विश्व की रचना से उसके नाश तक की आयु का नाम है (3) (पृष्ठ-24)। छ: वेदांग में कल्प का अपना ही महत्व है। कल्पवेदांग का प्रमुख विषय कर्मों का प्रतिपादन संस्कारों की व्याख्या और यज्ञों के विधि विधान का वर्णन करना है (6)। अर्थात आर्यो के वैयक्तिक पारिवारिक और सामाजिक जीवन के क्या नियम हो, वे किन संस्कारों व कर्तव्य का अनुष्ठान करें, इन सब महत्वपूर्ण विषय का प्रतिपादन कल्प वेदांग के अंतर्गत किया जाता है। वैदिक धर्म में याज्ञिक कर्मकांड तथा संस्कारों का महत्वपूर्ण स्थान था।

ब्राह्मण ग्रंथों की रचना करने का भी यही था उद्देश्य था कि याज्ञिक विधि-विधान का निरूपण तथा उनमें वेद मंत्रों का किस प्रकार से विनियोग किया जाए , किन्तु वे विवेचन इतने जटिल हो गए कि बादमें यह आवश्यकता अनुभव की गई थी याज्ञिक विधि-विधान और संस्कारों आदि का संक्षेप में एवं सरल विधि से निरूपण किया जाए, क्योंकि क्रियात्मक रूप से यह अत्यंत आवश्यक और अधिक उपयोगी था इसीलिए कल्प वेदांग की रचना की गई अर्थात वेदविहित कर्मों, यज्ञ संबंधी कर्मकांड तथा विविध संस्कार आदि का जिस शास्त्र में क्रमबद्ध रूप से प्रतिपादन किया जाए वही कल्प कहलाता है। इस विषय में सायनाचार्य के अनुसार - कल्पसूत्र मंत्रों का विनियोग बताकर यज्ञ अनुष्ठान की विधि का प्रतिपादन करते हैं और यही उनकी उप-कृति है।

कल्पसूत्र

वेद का प्रमुख विषय यज्ञ है। इस दृष्टी से कल्प वेदांग महत्वपूर्ण हैं। यज्ञों का जो विवेचन ब्राह्मण ग्रन्थों में प्राप्त है लेकिन वे बहुत ही जटिल हैं उनको सरल, शुलभ एंव स्पष्ट करने के लिए कल्प सूत्रों की रचना अनिवार्य थी। अतः "कल्प्यते समर्थ्यते याग-प्रयोगोत्र" (1) (पृष्ठ-2), जिसमें यज्ञ के प्रयोगों का समर्थन या कल्पना की जाए अथवा कल्प वेदविहित कर्मो को क्रमपूर्वक व्यवस्था करने का शास्त्र हैं। "कल्पो वेदविहितानं कर्मणामानुपुर्वेण कल्पनाशास्त्रम" (1) (पृष्ठ-2)। कल्प वेदांग के यह ग्रंथ सूत्रों के रूप में है , सूत्र का अर्थ – धागा सूत्रों में छोटे-छोटे चुस्त अर्थ अथार्त सारगर्भित वाक्यों को मानो एक धागे में पिरो कर रखा गया है संक्षिप्तता ही इनकी विशेषता है जैसे "गागर में सागर", इनका प्रभाव बहुत व्यापक एवं प्रभावी होता है।

कल्पसूत्र में गौतम, बोधायन, आपस्तंभ, हिरण्यकेशी, वशिष्ठ, हारित आदि कल्पसूत्रों का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। सूत्र ग्रंथों में वे सब विषय शामिल है जिन का विकसित रूप स्मृतियों तथा निबंधों में देखने को मिलता है। इन कल्प सूत्रों को चार भागों में विभक्त किया गया है (1) (पृष्ठ-7) – 1) श्रौतसूत्र, 2) शुल्वसूत्र, 3) धर्मसूत्र, 4) गृहसूत्र।

श्रौतसूत्र

श्रौतसूत्र ग्रंथों को ब्राह्मण ग्रंथों का सार कहा जा सकता है , क्योंकि ब्राह्मणग्रंथों में कर्मकांड अर्थात यज्ञ कर्मकांड आदि को अत्यंत विस्तृत रूप में बताया गया है और श्रौत सूत्रों में उन्हीं यज्ञ विधि-विधान का साररूप में वर्णन देखने को मिलता है। यद्यपि उन मे भी कहीं-कहीं भेद पाया जाता है (4) (पृष्ठ-63)।

ब्रहमचर्य आश्रम पूर्ण कर यदि विवाहित व्यक्ति श्रौतयज्ञ करना चाहता हैं, तो उसे आघान आरंभ करना चाहिए (3) (पृष्ठ-81)। कर्मकांड के लिए यज्ञ कुंड में अग्नि का आधान आवश्यक है। श्रौतसूत्र (वैदिक यज्ञ) आरंभ करने के लिए तीन प्रकार की पवित्र अग्नियों की आवश्यकता होती है (3) (पृष्ठ-81)। इन तीनों अग्नियों से सुसज्जित वेदी को ‘दार्शिकी’ वेदी कहा गया है (3) (पृष्ठ-81)। यह तीन अग्नि इस प्रकार हैं – दक्षिणाग्नि , गार्हप्रत्य अग्नि, आहवनीय अग्नि।

इन तीनों प्रकार की पवित्र अग्नियों को प्रसन्न करने के लिए आधान दिया जाता है। आधान के संपन्न करने के विषय में एक अलग से विधान बताया गया है। गार्हपत्यमें अग्नि निरंतर सुरक्षित रखी जाती है अर्थात गार्हपत्य अग्नि निरंतर जलती रहनी चाहिए। विहित निर्देशानुसार यज्ञ के समय इस अग्नि से ही अन्य दो कुंडों में अग्नि प्रज्वलित करनी चाहिए। यज्ञों को छोड़कर अन्य सभी होम आहवनीय अग्निमें ही किए जाते हैं।

अग्नि का आधान किस प्रकार किया जाए ? यह प्रतिपादित करने के साथ – साथ श्रौतसूत्रों में उनका भी निरूपण किया गया है। जिन्हें दैनिक रूप से या “विशेष" अवसरों या विशिष्ट प्रयोजन के लिए किया जाता है (4) (पृष्ठ-63)। मुख्य यज्ञ दर्शपौर्णमास यज्ञ जो प्रत्येक पक्ष के बाद में किया जाता था। आग्रायष्टि यज्ञ अन्न की फसल जब तैयार हो जाती है तो उसके बाद इस यज्ञ को संपादित किया जाता है। यह वह यज्ञ है जिसमें प्रमुख आहुतियां पुरोडास की डाली जाती है। पुरोडास पिसे हुए चावल की बनी हुई ‘हवि’ वो कहते हैं।

इस प्रकार के य ज्ञो में एक विशिष्ट आहुति आराध्य देवता के लिये होती है , जो इष्टि कहलाती हैं। ब्राह्मणों में इष्टि का एक विशेष वर्णन मिलता है। कुछ महत्वपूर्ण इष्टियां इस प्रकार हैं - आग्रयणेष्टि, आतिथयेष्टि, दर्शष्टि, दीक्षणीयष्टि, नवशस्यष्टि, पवमानेष्टि, पवित्रष्टि, पूर्णमासेष्टि, प्राजापत्यष्टि, प्रायणीयेष्टि, महाबैराजेष्टि, मित्रविंन्देष्टि, वैश्वानरेष्टि, साड़ग्रहणयेष्टि तथा सावित्रीष्टि (3) (पृष्ठ-83)। ऐसा कहा गया है कि सामान्यता एक पक्ष को 15 दिन में इष्टि करनी चाहिए। पूर्णमासे इष्टि पूर्णिमा के दिन जब चंद्र समस्त कलाओं से पूर्ण रहता है तथा दर्शीष्टि जब चंद्रोदय होता है की जाती है कुछ के ईष्टियां पूर्णतास्वतंत्र होती है जबकि अधिकांशतः इष्टियां किसी न किसी यज्ञ की सहायिका होती हैं।

चातुर्मास्य यज्ञ (ऋतु संबधी यज्ञ)

प्रत्येक चातुर्मास्य यज्ञ प्रत्येक प्रति चौथे मास के अंत में किया जाता है। अतः इन्हें चातुर्मासीय यज्ञ संज्ञा मिली हुई है (7)। ये क्रम से फागुन या चैत्र , आषाढ़ तथा कार्तिक की पूर्णमासी को किये जाते हैं। इन यज्ञ को चातुर्मास यज्ञ कहा गया है। इनसे तीन ऋतुएँ (बसन्त ,वर्षा और हेमन्त) के आगमन का निर्देश मिलता है (7) (पृष्ठ-535)। इन तीनों के नाम है – वैश्वदेव, वरुण प्रघास , शाकमेघ। वैश्वदेव एक इष्टि की तरह संपादित होता है किंतु इसकी प्रक्रिया अति विस्तृत होती है। वरुण प्रघास में प्रमुख आहुतियों में मानवी अंत:करण की पशु-प्रव्रुत्ति की आहुति मुख्य है। इसके अतिरिक्त 9 देवताओं को 9 प्रधान आहुतियां दी जाती है। इस आयोजन में या इस यज्ञ में एक विशेष प्रकार की वेदी भी प्रयोग में लाई जाती है (3) (पृष्ठ-83)। इस यज्ञ में एक अति महत्वपूर्ण कार्य होता है जिस में पत्नी की शुद्धि के संबंध में कर्मकांड होता है (3) (पृष्ठ-84)। शाकमेघ यज्ञ वैश्वदेव के समान ही है , कहीं-कहीं थोड़ा सा अंतर देखने को मिलता है (3) (पृष्ठ-84)। यदि वैश्वदेव पर्व चैत्र की पूर्णमासी को संपादित हो तो वरुण प्रघास एंव शाकमेघ क्रम से श्रवण एंव मार्गशीर्ष की पूर्णिमाओं के अवसर पर होते हैं (7)।

पशुबंध यज्ञ

पशुबंध अथवा निरूढ पशुबंध एक सरल प्रकृति का पशुयज्ञ है। यह सात हविर्यज्ञ में से एक है। इसका विधान पशुओं की प्राप्ति हेतु किया जाता है। शतपथ ब्राह्मण में इस यज्ञ का संक्षिप्त वर्णन मिलता है (3) (पृष्ठ-84)।

श्रौतसूत्र में पूरे एक वर्ष तक चलने बाला यज्ञ बाजपेय , राजसूय, अश्वमेघ, नरमेघ, सोत्रामणी आदि यज्ञों का वर्णन भी मिलता है। इनमें राजसूय, बाजपेय और अश्वमेघ यज्ञ का संबंध राजा के साथ है। कोई व्यक्ति तभी राजा माना जाता था , जब वह राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान कर विधिवत राज्यभिषेक करते

थे। राजसूय यज्ञ के बारे में शतपथ ब्राह्मण , पंच ब्राह्मण एंव तैत्तिरीय ब्राह्मण में इसका उल्लेख मिलता है। श्रौतसूत्र में इस यज्ञ का प्रमुख स्थान है। इसे संपादित करने का अधिकार केवल क्षत्रियों को ही दिया गया है। विशेष अवसरों पर और विशिष्ट प्रयोजनों से किये जाने वाले यज्ञों के अतिरिक्त अग्निहोत्र, बलि वैश्यदेव, अतिथि यज्ञ, देव यज्ञ या पितृ यज्ञ ऐसे महायज्ञ थे , गृहस्थ को जिन्हें करना अनिवार्य होता था। श्रौत सूत्रों में इन्हीं सब यज्ञों के विधि विधान का संक्षिप्त एंव सूत्र रूप में वर्णन मिलता है।

वर्तमान में वैदिक साहित्य के बहुत सारे कल्प सूत्र उपलब्ध नहीं हैं, पर जो उपलब्ध हैं उन सबका संबंध किसी न किसी वेद या उसकी शाखा से माना जाता है। ऋग्वेद के दो श्रौतसूत्र - आश्वलायन और शांखायायन , यजुर्वेद के श्रौत सूत्र - कात्यायन, बोधायन, आपस्तंभ, बैखानस, सत्याषाढ, भारद्वाज तथा मानव है। इसमें कात्यायन श्रौतसूत्र का संबंध शुक्ल यजुर्वेद से और अन्य सभी का संबध कृष्ण यजुर्वेद से है। सामवेद की विभिन्न शाखाओं व ब्राह्मणों के श्रौतसूत्र में 'पंचविस' ब्राह्मण का श्रौतसूत्र 'आर्षेय' या 'मशक' है। इसका नाम इसके रचयिता ऋषिमशक के नाम से है। सामवेद की कौथमी शाखा से संबंध लाट्यायन श्रौतसूत्र है , और राणायणीय शाखा से संबंध द्र:हायन श्रौतसूत्र। जैमिनीय श्रौतसूत्र का संबंध सामवेद की जैमिनीय शाखा से है। अथर्ववेद का मात्र केवल एक श्रौतसूत्र उपलब्ध है जिसे 'वैतान' श्रौतसूत्र कहते हैं। इसमें 8 अध्याय हैं , तथा जिसमें ऋतित्वजो तथा यजमान के कर्तव्यों का निरूपण किया गया है। श्रौतसूत्र का संबंध अथर्ववेद के गोपथ ब्राह्मण के साथ है (4) (पृष्ठ-64)।

कल्प वेदांग में प्रतिपादित याज्ञिक विधि विधानों को समझने में इनसे बहुत सहायता मिलती हैं। श्रौतसूत्रों में कात्यायन श्रौतसूत्र बहुत अधिक प्रसिद्ध है इसमें 26 अध्याय हैं जिनमें विविध यज्ञों के विधि विधान बड़े ही स्पष्ट रूप से प्रतिपादित है इस श्रौतसूत्र का आधार शतपथ ब्राह्मण है और इसमें प्रतिपादित विधि-विधान भी प्राय: शतपथ ब्राह्मण के अनुसार ही हैं।

शुल्बसूत्र

शुल्बसूत्र संस्कृत के सूत्रग्रन्थ हैं जो श्रौत कर्मों (वैदिक यज्ञ) से सम्बन्धित हैं। इनमें यज्ञ-वेदी की रचना से संबंधित ज्यामितीय ज्ञान दिया हुआ है। संस्कृत में शुल्ब शब्द का अर्थ नापने की रस्सी या दोरी होता है। अपने नाम के अनुसार वैदिक अग्नि वेदियों तथा यज्ञ से संबंधित निर्माण के माप के के इसमें निर्देश हैं। शुल्बसूत्रों में यज्ञ-वेदियों को नापना , उनके लिए स्थान का चुनना तथा उनके निर्माण आदि विषयों का विस्तृत वर्णन है (1) (पृष्ठ-11)। ये भारतीय ज्यामिति के प्राचीनतम ग्रन्थ हैं। श्रौतसूत्र का शुल्बसूत्र से गहरा संबंध है। ऐसा माना जाता है कि भारतीय गणित के संबंध में शुल्बसूत्र ही ज्ञान कराने वाले प्राचीनतम स्रोत हैं। इनमें अंक गणित और रेखा गणित दोनों का प्रारंभिक ज्ञान निहित है।

विभूतिभूषण दत्त के अनुसार , प्राचीनतम भारतीय गणित में ज्यामिति के लिए 'शुल्बविज्ञान' शब्द का प्रयोग किया जाता था। प्राचीन शुल्ब सूत्र ग्रन्थों में प्रमुख ग्रन्थ निम्नलिखित हैं - आपस्तंभ शुल्बसूत्र , बौधायन शुल्बसूत्र , मानव शुल्बसूत्र , वधुल शुल्बसूत्र, वाराह शुल्बसूत्र, कात्यायन शुल्बसूत्र , मैत्रायणीय शुल्बसूत्र, हिरण्यकेशी शुल्बसूत्र।

धर्मसूत्र

धर्मसूत्र के विषय में जानने से पूर्व हम धर्म के विषय में जान लें कि धर्म क्या है ? धर्म शब्द 'धृ' धातु से बना है जिसका अर्थ या आशय है धारण करना, आलंबन देना, पालन करना। हमारे वेदों में 'धर्म', 'धार्मिक विधियों ' या धार्मिक क्रिया - 'संस्कारों' के रूप में प्रयुक्त हुआ है (7) (पृष्ठ-3)। ऋग्वेद में 'तानि धर्माणी प्रथमान्यासन' इस कथन को प्रमाणित करती है। इसका अर्थ प्रथमा धर्मा 'ऋग्वेद 3.17.1 एंव 10.56.3 ' तथा 'सनता धर्माणी ', ('ऋग्वेद 3.3.1') का अर्थ प्रथम विधियाँ तथा प्राचीन विधियाँ हैं। 32 कहीं कहीं पर इसका अर्थ 'निश्चित नियम ' व्यवस्था या सिद्धांत या आचरण -नियम हैं। अथर्ववेद (9.9.17) में धर्म शब्द का अर्थ धार्मिक क्रिया संस्कार करने से अर्जित गुण के अर्थ में हुआ है।

छान्दोग्य उपनिषद (2.23) में धर्म की तीन शाखायें बतायीं हैं – 1) यज्ञ, अध्ययन एंव दान अर्थात गृहस्थ धर्म , 2) तपस्या अर्थात तापस धर्म, 3) ब्रह्मचारित्व अर्थात आचार्य के गृह में अंत तक रहना (7) (पृष्ठ-4)|

तैत्तिरीय उपनिषद (1.11) में धर्म शब्द छात्रों के परिवेश में 'सत्यं वद', 'धर्म चर'...... आदि। भागवत गीता में 'स्वधर्मे निधनं श्रेय:' में भी 'धर्म' शब्द का यही अर्थ है। पूर्वमीमासां-सूत्र जैमिनि वेद विहित अर्थात धर्म का संबंध उन क्रिया -

संस्कारों से है जिनसे आनन्द मिलता है और जो वेदों द्वारा प्रेरित एंव प्रशंसित हैं (7) (पृष्ठ-4)। गौतम धर्मसूत्र में धर्म की परिभाषा -'धर्म वही है जिससे आनंद एंव नि:श्रेयस की सिद्धि हो।

इससे यह तो स्पष्ट हो जाता है कि धर्म का व्यावहारिक अर्थ एंव स्वरूप समय- समय पर परिवर्तन होता रहा है, लेकिन बाद में मनुष्य या मानव के विशेषाधिकारों , कर्तव्यों, बन्धनों का ध्योतक, आर्य जाति के सदस्यों की आचार -विधि का परिचायक एंव वर्णाश्रम का ध्योतक हो गया। कुछ जगह पर 'अहिंसा परमो धर्मा' (अनुशासनपर्व) 115.1 'आचार: परमो धर्मा:' (मनुस्मृति - 1.108) आदि जगह धर्म की भिन्न - भिन्न परिभाषा दी गयी है। हमारे धर्म सूत्रों में 'वेद' धर्म का मूल हैं। जो धर्मज्ञ है, जो वेदों को जानते हैं उनका मत ही धर्म प्रमाण है ।35 (धर्मज्ञ समय: प्रमाणम्) वशिष्ठ धर्मं सूत्र 1.4.6 एंव मनुस्मृति में धर्म के उपादान पांच हैं – 1) सम्पूर्ण वेद, 2) वेदज्ञों की परम्परा, 3) व्यवहार, 4) साधुओं का आचार, 5) आत्म संतुष्टि। याज्ञवल्क्य 1.7 में वेद स्मृति सदाचार जो अपने को प्रिय लगे तथा उचित संकल्प से उत्पन्न इच्छा ये धर्म के उपादान हैं (7) (पृष्ठ-5)।

प्रारम्भ में धर्मसूत्र कल्प के अंग थे और उनका अध्ययन स्पष्ट रूप से चरणों शांखाओं में ही हुआ करता था। वर्तमान में सभी धर्मसूत्र प्राप्त नहीं हैं परन्तु जो प्राप्त हैं उनमें - आपस्तंभ, हिरणयकेशी तथा बोधायन चरणों में कल्प परम्परा की सम्पूर्णता है अर्थात इन तीनों के ही श्रौतसूत्र , गृहसूत्र और धर्मसूत्र प्राप्त हैं। आचार्य जैमिनि सभी आर्यो के लिए सभी धर्मसूत्र तथा गृहसूत्र प्रमाण हैं (7) (पृष्ठ-5)। इन धर्मसूत्रों के अतिरिक्त वशिष्ठ धर्मसूत्र, वैखानस धर्मसूत्र और विष्णु धर्मसूत्र का नाम भी प्रमुख है।

धर्मसूत्र की विषय वस्तु एंव प्रकरणों में धर्मसूत्रों का गृहसूत्रों से घनिष्ट संबंध है। अधिकतर गृहसूत्रों में धर्मसूत्रों के ही विषय मिलते हैं। पूतगृहाग्नि, गृहयज्ञ विभाजन , प्रातः सायं की उपासना, अमावस्या पूर्णमासी की उपासना , पके भोजन का हवन, वार्षिक यज्ञ , पुंसवन, जातकर्म, विवाह, उपनयन एंव अन्य संस्कार छात्रों स्नातकों एंव छुट्टियों के नियम, श्राद्ध कर्म, मधुपरक है। गृहसूत्रों का संबंध गृह कार्यो से संबंधित हैं। धर्मसूत्रों में उपरोक्त कुछ विषय - वस्तुओं या प्रकरणों के विषय में कुछ नियम पाए जाते हैं। धर्मसूत्रों में गृह जीवन के क्रिया संस्कारों के विषय में भी कहीं -कहीं कुछ-कुछ सूत्र मिलते हैं, वह भी बहुत कम , क्योंकि धर्मसूत्र की विषय परिधि बहुत विस्तृत है , उसका मुख्य विषय आचार विधि -नियम एंव क्रिया-संस्कारों की विधिवत चर्चा करना है।

आपस्तंभ गृहसूत्र एंव धर्मसूत्रों के बहुत से सूत्र एक ही हैं (7) (पृष्ठ-10)। कभी-कभी गृहसूत्र धर्मसूत्रों की ओर निर्देश भी कर बैठते हैं। बहुत से धर्मसूत्र या तो प्रत्येक चरण के भाग हैं या उनका संबंध गृहसूत्रों से है। व्यक्ति का परिवार और समाज से क्या संबंध रहे रहना चाहिये और परिवार तथा समाज के अंग के रूप में मनुष्य के क्या कर्तव्य हैं , इन विषयों का प्रतिपादन धर्मसूत्र में किया जाता है।

प्राचीन भारतीय चिंतकों के अनुसार मनुष्य का व्यक्तिगत तथा सामाजिक हित व कल्याण आश्रम व्यवस्था पर निर्भर होता है। मनुष्य का हित इसी बात में है कि वह अपने वर्ण , धर्म और आश्रम धर्म का ईमानदारी और निष्ठा सेपालन करे। धर्मसूत्र में राज्य भी मनुष्य की सामाजिकता का एक प्रमुख अंग है। अतः राजा और प्रजा के कर्तव्य दंड विधान , न्याय व्यवस्था और राजकीय कर आदि भी धर्मसूत्रों के अंतर्गत ही आते भी है अतः इनका वर्णन भी धर्मसूत्रो में मिलताहै। मनुष्यों के खानपान, रहन-सहन, विवाह, उत्तराधिकार, ऋण और व्याज आदि भी धर्मसूत्र के अंतर्गत ही आते हैं। साथ ही धर्मसूत्र में मनुष्य के प्रतिदिन पंच महायज्ञ प्रायश्चित के कारण एंव अवसर, पाप मोचन की पांच बातें (जप , तप, होम, उपवास एंव दान) पवित्र करने के लिए वैदिक मन्त्र का वर्णन है (7) (पृष्ठ-11)।

बोधायन धर्मसूत्र के आचार्य , कृष्ण यजुर्वेद के आचार्य थे बोधायन धर्मसूत्र में यज्ञ के लिए पवित्रीकरण , परिधान, भूमि, घास, इंधन, बर्तन तथा यज्ञ के अन्य पदार्थों का पवित्रीकरण यज्ञ महता के नियम, यज्ञ, पात्र, पुरोहित, याज्ञिक तथा उसकी स्त्री, घी, पकवान-दान, अपराधी, सोम एंव अग्नि के विषय में नियम है (7) (पृष्ठ-15)। साथ ही प्रतिदिन के पांच महायज्ञ (7) (पृष्ठ-15) चारों जातियां एंव उनके कर्तव्यों का वर्णन होता है। वशिष्ठ धर्मसूत्र में विशेष आदर पाने वाले छ: प्रकार के व्यक्ति में यज्ञ के पुरोहित का नाम आता है (7) (पृष्ठ-21)।

विष्णु धर्मसूत्र में गृहस्थ धर्म , पाकयज्ञ और प्रतिदिन के पांच महायज्ञ का वर्णन मिलता है। वर्तमान में उपलब्ध धर्मसूत्र हैं -

गौतम धर्मसूत्र , बोधायन धर्मसूत्र , आपस्तंभ धर्मसूत्र , हिरणयकेशी धर्मसूत्र , वशिष्ठ धर्मसूत्र , विष्णु धर्मसूत्र , हारित धर्मसूत्र, मानव धर्म सूत्र और शंख लिखित धर्मसूत्र।

गृहसूत्र

गृहसूत्रों में मुख्यतः गृह संबंधी के याज्ञिक कर्मों एवं संस्कारों का वर्णन है, जिसका सम्बन्ध मुख्यतः गृह्स्थ से है। प्राचीन भारतीय मनीषियों गृहस्थ आश्रम को सब आश्रमो में प्रमुख आश्रम मानते थे और अन्य आश्रमों में (ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और सन्यास) को उसकी आधारशिला मानते थे। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि धर्म ग्रंथों में गृहस्थ के कर्तव्य तथा धर्मों का विशेष रुप से प्रतिपादन किया जाए जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य का जीवन किस प्रकार से मर्यादित रहे। इसके लिए भारतीय धर्म शास्त्रों में अनेक संस्कारों का विधान किया गया है (4) (पृष्ठ-64)। जिन का मुख्य उद्देश्य मनुष्य काजीवन मर्यादित करना तथा उच्च आदर्शों को सामने रखकर उसे कर्तव्यों का बोध कराना है। लेकिन मुख्य 16 संस्कार हैं जिनको मान्यता प्राप्त है। जिनमें गर्भाधान , पुंसवन, सिमन्तोनयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, यज्ञोपवीत, उपनयन, समावर्तन, विवाह और अंत्येष्टि मुख्यरूप से है। गृहसूत्रों में इनका वर्णन शास्त्रीय विधि-विधान से किया गया है (4) (पृष्ठ-65)। जहां श्रौतसूत्र बड़े-बड़े यज्ञ तक सीमित हैं और परिवेशसामाजिक दृष्टि से अधिक संकुचित हैं (1) (पृष्ठ-19)। धर्मसूत्र व्यक्ति को समाज के बीच लाकर खड़ा कर देता है (1) (पृष्ठ-11)। लेकिन गृहसूत्र घरेलू या पारिवारिक तथा परिवार के लिए आवश्यक धार्मिककर्तव्यों का वर्णन करते हैं। गृहसूत्रों में भारतीय संस्कृति की जिन घटनाओं का विवेचन है वे गार्हपत्य अग्नि की क्रियाएं विवाह के साथ ही प्रारंभ होतीं हैं। गृहसूत्रों में कर्मों का संबंध घरेलू प्रथाओं और रीति-रिवाजों से है (1) (पृष्ठ-19)।

अश्वालायन गृहसूत्र में ''गृह'' शब्द का अर्थ घर और पत्नी है जैसे "सगृहो गृहमागतः" (1) (पृष्ठ-10), इसमें गृह का प्रयोग पत्नी और घर दोनों ही अर्थों में किया गया है। गृहकर्म उस अग्नि में होते है जो अग्नि विवाह के समय जलाई जाती है। इस अग्नि या अग्नि की वेदीको गृह्य कहते है। बड़े यज्ञोमें अग्नि की कई वेदियाँ बनाई जाती थी लेकिन गृह कार्यो में अग्नि की एक ही वेदी बनाई जाती है। गृहसूत्रों के अनुसार जो कर्म किए जाते हैं उसका सामान्य नाम पाकयज्ञ है। पाक का अर्थ पकाना नहीं बल्कि छोटा या पूर्ण है, अथार्त वह कर्म जो मनुष्य को योग्यता प्रदान करते है (1) (पृष्ठ-11)। गृहसूत्रों में जिन कर्मों का वर्णन किया जाता है वह आचार लक्षण है क्योंकि इनके ज्ञान का प्रयोग आचार के द्वारा होता है , श्रुति से नहीं ; "आपस्तंभ गृहसूत्र''का यह प्रथम सूत्र है- 'अथ कर्माण्याचाराधयानि गृह्यन्ते' (1) (पृष्ठ-11)।

पाकयज्ञ कई भागों में बंटा हुआ है। पारस्कर गणित गृहसूत्र में पाकयज्ञ को चार भागों में बांटा गया है - हुत , आहूत, प्रहुत और प्राशित। बोधायन गृहसूत्र में पाकयज्ञ सात प्रकार के बताये गए हैं - बली हरण, प्रत्यय रोहण तथा अष्टका होम। यज्ञ में आहुति देने को हुत कहा जाता है। आहुति के बाद दक्षिणा को प्रहुत कहते हैं , और यदि कर्म करने वाला उपहार प्राप्त करता है तो उसे आहूत कहा जाता है , जैसे उपनयन और समावर्तन (1) (पृष्ठ-11)।

छोटे यज्ञों का वर्णन जो प्रत्येक गृहस्थ अपने गृह स्थानों या घरेलू अग्नि में स्वयं करता है। गृहसूत्र में मिले-जुले विषय हैं जैसे कि गृह-निर्माण संबंधी कर्म , नए अन्न के ग्रहण करने के कर्म, धरती पर सोने के लिए विधान, बीमार बालक व पत्नी के रोग को दूर करने के लिए अभिचारिक क्रियाएं; प्रत्येक वर्ष में किए जाने वाले पंच महायज्ञ - भूतयज्ञ, मनुष्ययज्ञ, पितृयज्ञ, देव और ब्रह्मयज्ञ।

भूतयज्ञ -जब जीवो को बलि (भोजन का टुकड़ा या पिंड या ग्रास) दिया जाता है तो उसे भूत यज्ञ कहते हैं। जब ब्राह्मण या अतिथियों को भोजन कराया जाता है तो उसे मनुष्ययज्ञ कहते हैं। और जब पितरों को श्रद्धा पूर्वक श्राद्ध किया जाता है भले ही वह जल क्यों ना हो वह पितृयज्ञ कहलाता है। देवयज्ञ अग्नि में आहुति दी जाती है भले ही वह केवल समिधा ही क्यों ना हो वह देवयज्ञ है। और जब मनुष्यों के द्वारा स्वाध्याय किया जाता है, चाहे एक ही ऋचा हो या किसी भी वेद एक सूक्तहेतु वह ब्रह्मयज्ञ कहलाता है। इस पंच महायज्ञ का महत्व इस बात से स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक काल से ही इनको प्रत्येक गृहस्थ को करना अनिवार्य है।

शतपथ ब्राह्मण (11/5/6/1) में इस पंच महायज्ञ को महान सत्र कहा है। गृहसूत्रों में आश्वलायन गृहसूत्र मे (3/1/1-4) पंच महायज्ञ यज्ञों के विषय में बताया है और कहां है कि मनुष्य को प्रतिदिन यह यज्ञ करना चाहिए। आप स्तंभ धर्मसूत्र भी (१/४/१२/१एवं१/४/१३/१), इसी प्रकार गौतम

(५/८एवं८/१७), बौधायन धर्मसूत्र (२/६/१-८), गोभिलस्मृति (२/१६), इत्यादि में भी पंच महायज्ञ का वर्णन है। गौतम(८/७) में तो इन्होंने इनको संस्कारों के अंतर्गत लिया है। श्राद्ध कर्म , पितृयज्ञ तथा लघु क्रियाएं आदि का वर्णन गृहसूत्र में मिलता है।

प्रत्येक गृहसूत्र का संबंध किसी न किसी वेद से है , लेकिन अधिकांश गृहसूत्रों का संबंध यजुर्वेद से है। आपस्तंभ गृहसूत्र के प्रथम पटल में 21 प्रकार के यज्ञों का वर्णन है। तैत्तिरीय संहिता कृष्ण यजुर्वेद शाखा से संबंधित गृहसूत्र , जो वर्तमान में उपलब्ध है , वह है - बोधायन गृहसूत्र , आपस्तंभ गृहसूत्र , भारद्वाज गृहसूत्र, हिरणयकेशी गृहसूत्र। कृष्ण यजुर्वेद की कंठ शाखा से काठक गृहसूत्र उपलब्ध है। शुक्ल यजुर्वेद का एकमात्र गृहसूत्र पारस्कर गृहसूत्र उपलब्ध है। कृष्ण यजुर्वेद की मैत्रायणी शाखा का उपलब्ध गृहसूत्र मानवगृहसूत्र है। ऋग्वेद का अश्वलायन गृहसूत्र , शाख्यॉंयन गृहसूत्र , कौषितकी गृहसूत्र, सामवेद का गोभिल गृहसूत्र प्रमुख है। यह सबसे प्राचीन है , और यह कई इष्टियों में महत्वपूर्ण है। सामवेद के दूसरे प्रमुख गृहसूत्र - खदिर गृहसूत्र और जैमिनीय गृहसूत्र है। अथर्ववेद से संबंधित एकमात्र गृहसूत्र जो वर्तमान में उपलब्ध है वो कौशिक गृहसूत्र है।

निष्कर्ष

यज्ञ वैदिक जीवन का प्रमुख अंग हैं। यज्ञ को भारतीय ऋषि, मुनियों, मनीषियों ने एक मात्र कर्मकांड न मान कर समस्त ब्रह्मांड का मूलभूत आधार माना हैं। कल्प वेदांग का सम्बन्ध इसी वैदिक यज्ञो के विधिविधान से हैं। कौन सा यज्ञ कब किया जाय , कैसे किया जाय आदि का वर्णन श्रौतसूत्र, गृहसूत्र, धर्मसूत्र, शुल्वसूत्र में सरल और सूत्र रूप में किया गया हैं। कल्पसूत्रों की सबसे बड़ी विशेषता यज्ञ व कर्मकांड का सूत्ररूप एवं सरल होना हैं। कल्पसूत्रों में बाह्य यज्ञ एवम आंतरिक जीवन यज्ञ के सूत्र दिये गये हैं। आज भी इन सूत्रो में से जीवन यज्ञ के सूत्र प्राप्त किये जा सकते हैं।

सन्दर्भ

1. पाण्डेय डॉ उमेश चन्द्र (हिंदी व्याख्याकार) । आपस्तंभ गृहसूत्र । पंचम संस्करण, चौखम्बा संस्कृत भवन , वाराणसी - 221001, भारत । 2014, पृष्ठ-1
2. आप्टे, विनायक गणेश (संपादक) । निरुक (1/10) । आनंद आश्रम मुद्रणालय, पुणे । 1926
3. डॉ इंदु । हिन्दू धर्म शास्त्र । अनंग प्रकाशन, दिल्ली 110053 । 2007, पृष्ठ-23
4. सत्यकेतु विधालंकार । प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग । पाचवा संस्करण , श्री सरस्वती सदन , नई दिल्ली - 190029 । 1996, पृष्ठ-56
5. ब्रजबल्लभ मिश्र । भरत और उनका नाट्य शाश्त्र (14/45) । उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केंद्र-211001
6. गैरोला बाचस्पति । भारतीय धर्म शाखाएं और उनका इतिहास । चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी-221001 । 2014, पृष्ठ-5
7. महामहोपाध्याय डॉ पांडूरंग वामन काणे (अनुवादक - अर्जुन चौवे काश्यप) । धर्मशास्त्र का इतिहास भाग -1 । तृतीय संस्करण, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान (हिंदी समिति प्रभाग) लखनऊ । 1980, पृष्ठ-535